International Journal of Advanced Research and Development
ISSN: 2455-4030
Impact Factor: RJIF 5.24
www.advancedjournal.com
Volume 2; Issue 5; September 2017; Page No. 903-904

नैतिक मूल्यों के सन्दर्भ में 'महासमर' का अध्ययन

डॉ. पूनम काजल
असिस्टेंट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, हिन्दू कन्या महाविद्यालय, जींद, हरियाणा, भारत।

सारांश
महाभारतयुगीन परिस्थितियाँ तथा आधुनिक युगीन परिस्थितियाँ नैतिकता की दृष्टि से बहुत साम्य रखती हैं। वे मूल्य, जो कभी मानवीयता तथा समाज की पहचान होते थे तथा जिनके कारण ही कोई संस्कृति अथवा सभ्यता अपनी अस्मिता तथा गौरव को बनाए रखने में सक्षम होती थी, आज उनका अवमूल्यन होता दिखाई दे रहा है। समाज का नैतिक मानदण्ड अपेक्षाकृत शिथिल होने के कारण अनैतिकता ने शनैः–शनैः अपना साम्राज्य बढ़ाते हुए काफी प्रसार पा लिया है। सत्य तो यह है कि वर्तमान भारतीय समाज में व्यक्ति अपनी संस्कृति की पगडंडी से उतर कर दिग्भ्रमित हुआ इधर–उधर भटक रहा है। कदाचित इसी बात को लक्षित कर लेखक नरेन्द्र कोहली ने महाभारत को आधार बनाकर लिखी अपनी उपन्यास–शृंखला 'महासमर' में भारतीय संस्कृति के उज्ज्वलतम पक्षों को सुरक्षित रखने का भरसक प्रयास किया है।

मुख्य शब्द : आनृशंसता, अन्तर्निहित, अस्मिता, शाश्वत, प्रभूत, अविच्छिन्न।

प्रस्तावना
भारतीय संस्कृति विश्व की किसी भी संस्कृति की अपेक्षा अधिक जीवन्त, गतिशील एवं शाश्वत है। भारतीय संस्कृति उस महासमुद्र के समान है, जिसमें अनेक नदियाँ आ कर विलीन होती जा रही हैं। अपनी अद्भुत समन्वय शक्ति के बल पर भारत के सांस्कृतिक जीवन की धारा आज तक अविच्छिन्न रूप से बहती चली आ रही है। उसकी इस अजेय जीवनी शक्ति का रहस्य उसके अन्तर्निहित शाश्वत मूल्य हैं। सत्य, अहिंसा, परोपकार, त्याग, करूणा आदि मूल्य उसमें प्रभूत मात्रा में विद्यमान हैं। 'सत्यमेव जयते' व 'अहिंसा परमो धर्मः' के महान संदेश भारतीय संस्कृति के मूलाधार हैं। अहिंसा अनेक मानवीय मूल्यों का आधार है। इसलिए अहिंसा हमारी संस्कृति में परम धर्म के रूप में स्वीकृत है।

भारतीय संस्कृति प्रारम्भ से ही सत्य को अत्यन्त उच्च सिंहासन पर प्रतिष्ठित करती आई है। असत्य सत्य का ही विरोधी नहीं है, वरन् उन नैतिक आदर्शों का भी विरोधी है जो इस जगत को परस्पर सम्बद्ध करते हैं। कोहली के 'महासमर' में भारतीय संस्कृति का यह पक्ष अत्यन्त प्रबल रूप में उभर कर आया है।

भीष्म सत्य–पथ पर चलने वाला ऐसा व्यक्ति है, जो एक बार प्रतिज्ञा के बन्धनों में बंधकर आजीवन उस सत्य का पालन करता है। जीवन में आई निराशाजनक स्थितियां उसे सत्य–मार्ग से विचलित नहीं कर पाती। अपनी मां गंगा के समक्ष स्वीकारता है – "व्यक्ति, वंश, राज्य बड़ा है माता! या धर्म? सत्य पर चलना ही धर्म है। मैं सत्य नहीं छोड़ सकता; अपनी प्रतिज्ञा नहीं तोड़ सकता..... व्यक्ति, वंश या राज्य का स्वार्थ देखा जाए, तो संसार में न सत्य रहेगा, न धर्म।"[1]

'महासमर' का युधिष्ठिर नरेन्द्र कोहली के गाँधीवादी विचारों का साक्षात प्रतिरूप है। युद्धभूमि में उसका विपक्षी दल भी उसके सत्य का विश्वास करता है। युधिष्ठिर के व्यक्तित्व के इस पक्ष पर भीष्म विचार करते हैं – '.... पर युधिष्ठिर तो आरम्भ से ही ऐसा है। वह सत्य, न्याय, समता और आनृशंसता की बात करता है। वस्तुतः वह धर्म पर चलना चाहता है। धर्म का मार्ग उसे सत्य की ओर ले जाता है। सत्य के लिए न्याय आवश्यक है। न्याय के लिए समता चाहिए। समता के लिए आनृशंसता।..... [2]

सभी पाण्डव उसी का अनुसरण करते हुए सत्य–पथ पर अग्रसर हैं। कष्ट के समय यही सत्य उन्हें संघर्षों से जूझने का बल प्रदान करता है। द्रौपदी भी इस मार्ग पर चलती हुई पांडवों से कहीं भी पृथक नहीं है – "पिता, महाराज द्रुपद ने पहले दिन से ही अपनी संतान को यही सिखाया था; कष्ट, दुख, समस्या, संकट, द्वन्द्व इत्यादि को टालने के लिए असत्य का अवलम्ब मत लो; सत्य से सम्मुख साक्षात्कार करो। सत्य से व्यक्ति दुर्बल नहीं होता; सत्य उसे बल देता है..... ।"[3]

यह भी सत्य है कि हमारे यहाँ सत्य के सैद्धान्तिक और व्यावहारिक – दोनों पक्षों को अपनाया गया है। युद्ध के दौरान युद्धनीति के तकाजे से युधिष्ठिर 'अश्वत्थामा हतः' कहता है, किन्तु सत्य को न छिपाते हुए 'नरो वा कुंजरो वा' भी कह देता है, तो इसमें सत्य के सैद्धान्तिक व व्यावहारिक दोनों पक्ष स्पष्ट दिखलाई देते हैं।

सत्य, त्याग, सहानुभूति आदि अन्य मूल्यों की भाँति अहिंसा भी भारतीय संस्कृति का सर्वोच्च मूल्य है। धर्मग्रन्थों में 'अहिंसा परमो धर्मः' कहकर स्थान–स्थान पर अहिंसा के महत्व को प्रतिपादित किया गया है।

यह भी सत्य है कि अहिंसा पर प्रारम्भ से ही हमारा दृष्टिकोण वही रहा है जो आज विश्व की राजनीति में हम प्रतिपादित करना चाहते हैं। हम अपनी ओर से किसी भी कीमत पर हिंसा का आश्रय नहीं लेंगे, किन्तु हमारी अहिंसा नपुसंकता का पर्याय नहीं है। इस सम्बन्ध में उपन्यासकार नरेन्द्र कोहली की मान्यता है – 'क्षत्रिय का संकल्प हिंसा नहीं है। क्षत्रिय का संकल्प है न्याय! न्याय को स्थापित करने के लिए ही, हिंसा का अवलम्ब ग्रहण किया जाता है.. ... ।'[4]

ठीक यही बात हमारा इतिहास युगों से कहता है। हमारा सबसे बड़ा दर्शन गीता हिंसा और अहिंसा के गहरे मानसिक द्वन्द्व से ही तो पैदा हुआ है। अर्जुन को हिंसा करने में जो हिचकिचाहट होती है, उसी के कुछ क्षणों में गीता की वाणी उसके लिए आवश्यक हो

जाती है। कृष्ण उसे अन्याय का प्रतिकार करने हेतु प्रेरित करते हैं "क्षत्रिय का तेज अन्याय सहन नहीं कर सकता। तुम राज्य के लिए नहीं, न्याय के लिए लड़ोगे।"[5]

कोहली के विचारानुसार युधिष्ठिर को अपनी आनृशंसता की नीति को त्याग कर अन्याय का प्रतिकार करना ही होगा। कोहली लिखते हैं – '..... क्षत्रियों जैसा स्वभाव नहीं था युधिष्ठिर का। उसे हिंसा का प्रत्येक कृत्य नृशंसता लगता था; किन्तु क्षत्रिय होकर वह हिंसा से कैसे बच सकता था?'[6]

कोहली दुष्ट–दलन के लिए, न्याय की स्थापना के लिए अहिंसा की उपेक्षा आवश्यक मानते हैं, लेकिन अनावश्यक हिंसा के वे समर्थक नहीं हैं। 'बन्धन' उपन्यास का पाण्डु अपनी अक्षमता से क्षुब्ध होकर समूची सृष्टि को तहस–नहस कर देना चाहता है, लेकिन कोहली ऐसी किसी भी स्थिति को स्वीकार नहीं करते। पाण्डु की हिंसक वृत्ति का अप्रत्यक्ष विरोध करते हुए वे उसके मन में ऐसे विचारों की सृष्टि करते हैं कि उसका मन हिंसा से शून्य होकर विश्व–बन्धुत्व की भावना से ओत–प्रोत हो जाता है – ''दूसरों को सुखी देखकर, पाण्डु का वंचित हृदय, अपनी प्रतिहिंसा से संचालित होकर संसार भर का सुख छीनने का प्रयत्न करेगा.... संसार में विरोध, कष्ट, दुख, क्लेश बढ़ेगा.... क्या पाण्डु उससे सुखी हो सकेगा? क्या अपने चारों ओर एक तामसिक नरक का निर्माण कर पाण्डु आनन्दित होगा?..... वह तो और भी दुखी होगा। प्रतिहिंसा ने किसी को आज तक सुखी किया है क्या?'[7]

कोहली के महासमर का मुख्य प्रतिपाद्य 'मानवतावाद' भी है जो महात्मा गाँधी, मार्क्स, टालस्टॉय सभी को समान रूप से अभिप्रेत है। उपन्यासकार लिखते हैं – 'हम सारे विश्व की मंगल–कामना करते हैं। सबके स्वस्थ, नीरोग और दीर्घ जीवन के लिए प्रार्थना करते हैं.... ।'[8]

कोहली ने अपने 'महासमर' में विदुर, व्यास, कृष्ण व युधिष्ठिर के माध्यम से मानवतावाद को प्रतिष्ठित करने का भरसक प्रयास किया है। कृष्ण मानवतावाद के प्रबल समर्थक बन कर उभरते हैं – 'व्यक्ति की दृष्टि और उसके नाम की कसौटी बहुत संक्षिप्त है। बहुत छोटी है। वह सब कुछ तत्काल अपने लिए ही चाहेगा, तो मानवता का कल्याण कभी नहीं होगा। हमें अपने 'स्व' का विस्तार करना होगा। हमें अपने समाज ही नहीं, सम्पूर्ण मानवता की दृष्टि से सोचना होगा।'[9]

उदारता का भाव मानव–हृदय को विशाल बनाकर उसमें विश्व–बन्धुत्व की भावना की सृष्टि करता है। कोहली ने 'महासमर' में भीष्म आदि अनेक उदारवादी पात्रों की सृष्टि की है। कोहली लिखते हैं – 'जो व्यक्ति अपना और अपनी अगली पीढ़ियों का समग्र लौकिक सुख, किसी एक व्यक्ति के सुख के लिए इतनी सरलता से त्याग सकता है, उससे बड़ा अनासक्त और कौन होगा... .. ।'[10] कृष्ण, व्यास, सुभद्रा, युधिष्ठिर आदि पात्रों की दृष्टि भी इसी उदारता से सम्पन्न है।

त्याग एवं सद्भावना व्यक्तिगत गुण होते हुए भी भारतीय संस्कृति के अत्यन्त महत्वपूर्ण तत्व हैं। 'महासमर' में विदुर, व्यास, कुन्ती आदि पात्रों में सद्भावना की प्रवृत्ति अनेक बार प्रतिबिम्बित होती है। विदुर का व्यक्तित्व इस प्रवृत्ति का पूरा प्रतिनिधित्व करता प्रतीत होता है। निःसन्तान होते हुए भी गरीब, असहाय बालकों एवं स्त्री–पुरुषों को अपने घर में आश्रय दे कर उनका पालन–पोषण करना उनकी सद्भावना का ही प्रतीक है।

उद्देश्य

वस्तुतः कोहली की मान्यतानुसार इस संसार में जो कुछ भी अनैतिक है, वह हिंसा है। किसी का वध करना ही हिंसा नहीं, अपितु किसी को पीड़ित करना या किसी के अधिकारों का हनन भी हिंसा है। युधिष्ठिर के माध्यम से वे उस अनैतिक का स्पष्ट विरोध कर अहिंसा की प्रतिस्थापना करना चाहते हैं। युवराज्याभिषेक के पश्चात् भरी सभा में कहा गया युधिष्ठिर का कथन कोहली के अहिंसावादी विचारों की ही अभिव्यक्ति है – 'मेरा लक्ष्य कुरु शासित प्रदेश में धर्म–राज्य की स्थापना होगा। हमारी नीति होगी – आनृशंसता। हम किसी के भी प्रति नृशंस नहीं होंगे। वर्ण, जाति अथवा वर्ग–भेद के कारण किसी के अधिकार अथवा भावनाओं का निरादर नहीं होगा।..... मेरे राजदंड ग्रहण करने पर भी यदि प्रजा को कोई दुःख हो, तो मुझे विधाता रौरव नरक का दंड दे।'[11]

उपसंहार

कृष्ण–कथा 'महासमर' के केन्द्रीय पात्र कृष्ण के माध्यम से उपन्यासकार ने आधुनिक युग में बढ़ती हिंसा–वृत्ति पर अपनी दृष्टि जमाई है। इस समस्या और उससे जुड़े अनेक प्रश्नों को हल करने के लिए रचनाकार ने आदर्श पात्रों को 'युद्ध करना उचित है अथवा नहीं?' इस संशय से जूझते हुए दिखाया है। कृष्ण अन्त तक महाभारत युद्ध को टालने का प्रयास करते हैं। उनकी यह संशयग्रस्त मनःस्थिति उनकी दुर्बलता को नहीं दर्शाती, अपितु वह मानवीय सत्य व शान्तिमय और अहिंसक उपायों को खोज तथा उनके समर्थन की हामी भरती दिखाई पड़ती है। युधिष्ठिर के मुख से बार–बार 'आनृशंसता' शब्द का प्रयोग कोहली की इसी विचारधारा को प्रतिबिम्बित करता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. नरेन्द्र कोहली, कर्म, पृ. 13
2. वही, बन्धन, पृ. 284
3. वही, प्रत्यक्ष, पृ. 350
4. वही, अधिकार, पृ. 309
5. वही, बन्धन, पृ. 390
6. वही, कोहली, अंतराल, पृ. 52
7. वही, अभिज्ञान, पृ. 196
8. वही, बन्धन, पृ. 79
9. वही, अधिकार, पृ. 379